योग-दर्शन

योग दर्शन के प्रतिष्ठापक प्रणेता महर्षि पतंजलि को माना जाता है। साधारण अर्थ में योग का शाब्दिक अर्थ होता है 'जोड़ना'। किन्तु महर्षि पतंजलि ने जिस भावना से 'योग' शब्द का प्रयोग किया है, वह है — 'चित्तवृति निरोधस्य योगः' अर्थात् चित-वृतियों का निरोध ही योग है। जब साधक चित्-वृतियों के निरोध द्वारा परम-सत्ता में विलीन हो जाता है, कैवल्य को प्राप्त कर लेता है, तो उसे योग कहा जाता है। यही योग का असली स्वरूप है। दूसरे शब्दों में साधारण-आत्मा का असीम-परमात्मा से साक्षात्कार होना ही योग है।

सांख्य और योग दर्शन में परस्पर अन्योन्याश्रय संबंध है। दोनों मिलकर पूर्ण दर्शन बनते है। योग दर्शन में सांख्य दर्शन के पच्चीसों तत्वों को मानकर सांख्य की सृष्टि-प्रक्रिया, परिणामवाद, गुणवाद आदि सिद्धांतों को मानते हुए चित् अर्थात् बुद्धि के रहस्यों का विस्तृत व्याख्या भी गई है। चित्वृति ही जीव के बन्धन का कारण है, तथा चित्तवृति से निरोध ही मोक्ष (कैवल्य) है। सांख्य के सिद्धान्तों का व्यावहारिक जीवन में प्रयोग ही योग है। ज्ञान के विषय में सांख्य के विचार को योग भी स्वीकार करते हैं। सांख्य के पच्चीस तत्वों को स्वीकार करते हुए उनमें योग एक और तत्व को जोड़ देते है — ईश्वर को। जहाँ सांख्य मत के अनुसार विवेक-ज्ञान ही मुक्ति का साधन है, वहीं योग भी इस मत को स्वीकार करते हुए कहते हैं कि-योगाभ्यास ही विवेक-ज्ञान का साधन है।

योग दर्शन के प्रणेता महर्षि पतंजलि द्वारा रचित पातंजल सूत्र या योगसूत्र ही इस दर्शन का मूल ग्रंथ है। पातंजल सूत्र चार पादों में विभक्त है — समाधि-पाद, साधना-पाद, विभूति-पाद एवं कैवल्य पाद।

Scanned with CamScanner